

दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

आरक्षित तिथि: 27.01.2023

निर्णय तिथि:18.04.2023

+ आप.पु.या. 451/2018 और आप.वि.आ. 9623/2018

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो.....

.....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री जीवेश नागरथ, वि.लो.अभि.  
साथ सुश्री. मोनिका प्रकाश,  
अधिवक्ता

बनाम

एस.के घोष और अन्य

.....प्रत्यर्थागण

द्वारा: कोई नहीं

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री. स्वर्ण कांता शर्मा

## निर्णय

### न्या. स्वर्ण कांता शर्मा

1. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके पश्चात् ' दं.प्र.सं. ') की धारा 482 के साथ पठित धारा 397/401 के अधीन वर्तमान पुनरीक्षण याचिका याचिकाकर्ता अर्थात् केंद्रीय जांच ब्यूरो (इसके बाद 'केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो') द्वारा दायर की गई है। यह दिनांक 05.03.2018 और 31.03.2018 के आदेशों को विद्वान विशेष न्यायाधीश (पी.सी.अधिनियम) केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, कड़कड़मा न्यायालय, नई दिल्ली (इसके बाद 'विचारण न्यायालय') द्वारा पारित किया गया।, यह केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, ए. सी. बी., नई दिल्ली में पंजीकृत आर. सी. नं. 57 (ए) / 1999, से उत्पन्न केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो सं 31/2016 है, जिसके तहत विद्वान विचारण न्यायालय ने दं.प्र.सं.की धारा 313 के तहत परीक्षा के लिए आरोपी व्यक्तियों को प्रश्न देने के लिए साक्ष्य को साबित करने के लिए केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो / याचिकाकर्ता को एक प्रारूप तैयार करने के लिए निर्देश दिया और इसके परिणामस्वरूप केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो / याचिकाकर्ता पर दोष लगने वाला साक्ष्य को दायर नहीं करने पर जुर्माना लगाया गया।
2. संक्षेप में, वर्तमान मामला स्रोत की जानकारी के आधार पर दर्ज किया गया था जिसमें श्री एस के घोष पर आरोप लगाया गया था। वर्ष 1998-99 के दौरान भारत एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड (बाल्को) में मुख्य प्रबंध निदेशक के रूप में कार्यरत रहने के दौरान, आपराधिक साजिश रची थी सह-आरोपी (i) श्री पी. सी.

अग्रवाल, निदेशक (वाणिज्यिक), बाल्को (ii) श्री. जी.एस. संधू, महाप्रबंधक (सी एंड ई), (iii) श्री परवीन एन. शाह, निदेशक, अनीश मेटल्स प्राइवेट लिमिटेड लिमिटेड और (iv) श्री. कीर्ति शाह, निदेशक, अनीश मेटल्स प्राइवेट लिमिटेड के साथ, बाल्को को गलत आर्थिक नुकसान पहुंचाने और सह-अभियुक्त व्यक्तियों अर्थात् श्री परवीन एन.शाह और पी.एन. कीर्ति शाह को गैरकानूनी लाभ प्राप्त हेतुक के लिए एक लोक सेवक के रूप में अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग किया था।

3. जांच पूरी होने के बाद, भारतीय दंड संहिता 1860 की धारा 420/120 बी और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2)/13 (I) (डी) के तहत विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष आरोप-पत्र दायर किया गया था और दिनांक 03.01.2012 को आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ आरोप तय किए गए थे। मुकदमे के दौरान, अभियोजन पक्ष ने 23 अभियोजन गवाहों की पूछताछ की और मामला दं.प्र.सं. धारा 313 के तहत दिनांक 04.01.2018 के लिए आरोपी व्यक्तियों की परीक्षा के लिए तय किया गया था।

4. वर्तमान याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि दिनांक 04.01.2018 को, विद्वान विचारण न्यायालय ने मौखिक रूप से केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अगली सुनवाई की तारीख से दो दिन पहले जो 20.01.2018 अपराध साक्ष्य वाले मसौदा प्रश्न प्रस्तुत करने का निर्देश दिया था, यह कहा गया है कि संबंधित अभियोजक द्वारा 61 मसौदा प्रश्न प्रस्तुत

किए गए थे जो 20.01.2018 को आरोपी व्यक्तियों को भी प्रदान की गई थी, और मामले को आगे की जांच के लिए 03.02.2018 निर्धारित किया गया था। इसके बाद, अगली तारीख पर, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा प्रश्न संख्या 62 से 104 का मसौदा विचारण न्यायालय को प्रस्तुत किया गया था न्यायालय ने कहा था कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की ओर से अपराध साबित करने वाले साक्ष्य पेश करने की गति बहुत धीमी थी और निर्देश दिया था कि सुनवाई की तारीख से पहले पूरे अपराध साबित करने वाले साक्ष्य दाखिल किए जाएं।

5. यह कहा गया है कि अभियोजन पक्ष 05.03.2018 को पूरे साक्ष्य का मसौदा दाखिल नहीं कर सका, क्योंकि संबंधित अभियोजक इस कारण से छुट्टी पर था कि उसके बेटे को सिर में चोट लगी थी और अन्य आधिकारिक कार्यों में उसकी व्यस्तता थी। यह भी कहा गया है कि एक ही न्यायालय में, कुल चार मामले थे जो दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत आरोपी का बयान दर्ज करने के लिए तय किए जा रहे थे। एक के बाद एक और अभियोजन / केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तीन अन्य मामलों में भी प्रश्नों का मसौदा तैयार किया था।

6. तत्पश्चात, विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 05.03.2018 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता/ केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो. पर रु. 16,600/- का जुर्माना लगाया और उसके आचरण पर निश्चित टिप्पणियां पारित कीं। उक्त आदेश निम्नलिखित रूप में पुनः प्रस्तुत किया गया है:

“05.03.2018 (10.55 पूर्वाह्न पर)

उपस्थित: श्री यु.सी. सक्सेना, निरीक्षक के साथ केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो .सुदीप पुनिया, मु.जाँ.अधि. के लिए वरिष्ठ लो.अभि.।

श्री धरमवीर सिंह, एसपी (एसडीओपी), केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के साथ सुभाष चंद्र, प्रभारी समन प्रकोष्ठ केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो।

सभी पाँच अभियुक्त व्यक्ति जमानत के लिए व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हैं।

श्री. अनिल कुमार, ए-1 के अधिवक्ता।

श्री. शिव शंकर सिंह, ए-2 के अधिवक्ता।

श्री. प्रशांत जैन, ए-4 और ए-5 के अधिवक्ता।

सभी पांच अभियुक्त व्यक्तियों ने उन्हें दिए गए प्रश्नों के सत्यापित सेट के साथ अपने उत्तर दाखिल किए हैं अर्थात् क्र. सेट नं. 62 से 104 रिकॉर्ड पर ले लिया गया है। अभियुक्त ए4 और ए5 की ओर से प्रस्तुत बांड पर आज सत्यापन रिपोर्ट दाखिल की गई। रिपोर्टों को ध्यान में रखते हुए, दोनों बंध पत्र स्वीकार कर लिए गए हैं।

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के पुलिस अधीक्षक (एसडीओपी) धरमवीर सिंह ने कहा कि दिनांक 03.02.2018 और 20.01.2018 के अंतिम दो आदेशों की प्रति किसी अन्य पुलिस अधीक्षक के कार्यकाल के दौरान विभाग में प्राप्त हुई थी और वह हाल ही में इस विभाग में शामिल हुए हैं। उन्होंने आगे कहा कि सुनवाई की तारीख के लिए बंध पत्र के

सत्यापन के संबंध में प्रतिवेदन अनजाने में तीस हजारी न्यायालय को भेज दी गई थी और इस कारण से, रिपोर्ट यहां दाखिल नहीं की जा सकी।

इस तारीख से दो दिन पहले दोषारोपण साक्ष्य का कोई मसौदा दायर नहीं किया गया था, जैसा कि सुनवाई की तारीख अर्थात् दिनांक 03.02.2018 पर निर्देशित किया गया था। आज उपस्थित सभी अधिकारियों की प्रतिक्रिया द्वारा मुझे ऐसा लगता है कि शायद किसी ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को पढ़ने और इस तरह के निर्देशों को जानने की जहमत नहीं उठाई। मु.जां.अधि. का कहना है कि वह सुनवाई की तारीख पर छुट्टी पर थे और 12.02.2018 को इयूटी में शामिल हुए। श्री सक्सेना, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के वरिष्ठ लोक अभि. भी सुनवाई की तारीख पर छुट्टी पर थे, जिन्होंने आज कुछ मसौदा तैयार करने की पेशकश की। जाहिर तौर पर, आज के दिन के दौरान दोषारोपण साक्ष्य का मसौदा तैयार करना संभव नहीं है। स्थिति का सारांश यह है कि इस न्यायालय द्वारा पारित निर्देशों का केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा उल्लंघन किया जाता है। यह वह स्थिति है जब आदेशों की प्रति विभाग के प्रमुख को इस उम्मीद के साथ भेजी गई थी कि सुनवाई की तारीख तक आवश्यक कार्य पूरा कर लिया जाएगा।

यह इस न्यायालय का सामान्य अनुभव बन गया है कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के अधिकारी इस न्यायालय द्वारा पारित निर्देशों का पालन करने के लिए अनिच्छुक रहते हैं। सभी के लिए चेतावनी केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए यहां मामले दर्ज किए जा रहे हैं कि इस न्यायालय के समक्ष लंबित किसी भी मामले में कार्यवाही से उत्पन्न होने वाली ऐसी किसी भी स्थिति में, यह न्यायालय द्वारा पारित आदेशों की अवज्ञा के आधार पर न्यायालय का अवमानना के लिए संदर्भ हेतु बताओ नोटिस जारी करने के बारे में सोचने के लिए मजबूर होगी।

वर्तमान में, मैं श्री धरमवीर सिंह, पुलिस अधीक्षक (एसडीओपी) केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के आश्वासन पर ऐसा नहीं कर रहा हूं। उन्होंने आगे कहा कि वह यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त कदम उठाएगा कि किसी भी मामले में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के कर्मचारियों द्वारा किसी भी आदेश की अवज्ञा न की जाए।

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के कर्मचारियों द्वारा किए गए कर्तव्य के अभाव के कारण मामले को स्थगित करना पड़ा है, ताकि शेष साबित करने वाले साक्ष्य का मसौदा प्रस्तुत किया जा सके। दो आरोपी जो मुंबई से आते हैं। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को दी गई एक महीने की अवधि को बर्बाद कर दिया गया था और इसलिए, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पर आरोपी ए1, ए2 और ए3 को भुगतान करने के लिए रु.1,000/- रुपये का जुर्माना लगाया जा रहा है। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पर ए4 और ए5 को भुगतान करने के लिए 6,800/- का जुर्माना लगाया

गया है। प्रत्येक अभियुक्त के लिए आज इस कार्यवाही के लिए इस न्यायालय में उपस्थित होने के लिए वित्तीय निहितार्थ के अनुसार लागत लगाई गई है। चूंकि ए4 और ए5 मुंबई से आते हैं, इसलिए उनके लिए अलग-अलग लागत लगाई गई है।

सुनवाई की तारीख तक सभी अभियुक्त व्यक्तियों को लागत का भुगतान किया जाना चाहिए। श्री धरमवीर सिंह, पुलिस अधीक्षक (एसडीओपी), के अनुरोध पर केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, इस आदेश की एक प्रति उन्हें अनुपालन और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के रिकॉर्ड के लिए दस्ती दी जाए।

सुनवाई की तारीख से कम से कम दो दिन पहले शेष साक्ष्य का मसौदा दाखिल किया जाना चाहिए।

आगे के एसए के लिए 31.03.2018 को प्रकाशित करें

"(जोर दिया गया)

7. यह आगे कहा गया है कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने 26 प्रश्नों का मसौदा दायर किया था। प्रश्न संख्या 105 से 130 तक, 29.03.2018 को अभियोजक का संचालन करने वाले नियमित परीक्षण की अनुपस्थिति में अर्थात् सुनवाई की तारीख से दो दिन पहले। विद्वान विचारण न्यायालय ने उक्त प्रश्नों को उचित नहीं पाया और फिर से केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और उसके अधिकारियों के कामकाज पर प्रतिकूल टिप्पणियां कीं। दिनांक 31.03.2018 का आदेश इस प्रकार है:



"31.03.2018 (10.45 a.m. पर)

उपस्थित: श्री. एम. सरस्वत (स्थानापन्न) लोक अभि, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो. के साथ सुदीप पुनिया, मु.जां.अधि.।

सभी पाँच अभियुक्त व्यक्ति जमानत, पर व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हैं।

श्री. सी.एस. शर्मा, ए-1 के अधिवक्ता।

श्री. शिव शंकर सिंह, ए-2 के अधिवक्ता।

श्री. प्रशांत जैन, ए-4 और ए-5 के अधिवक्ता।

श्री. बी.पी. सिंह, A-3 के अधिवक्ता।

मु.जां.अधि. ने दोषारोपण साक्ष्य के मसौदे के साथ एक अनुपालन प्रतिवेदन दायर किया है। प्रतिवेदन में कहा गया है कि इस न्यायालय ने सुनवाई की तारीख पर केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पर जुर्माना लगाया था और इस तिथि से दो दिन पहले साक्ष्य का मसौदा दायर करने का निर्देश दिया था। हालांकि, लागत के भुगतान से संबंधित मामले को प्रशासनिक मंजूरी लेने के लिए वरिष्ठ अधिकारियों के समक्ष रखा गया था और इसे अंतिम रूप देने के लिए कुछ और समय की आवश्यकता है। यह भी बताया गया है कि इस मामले में अपराध साबित करने वाले साक्ष्य श्री यु.सी. सक्सेना , केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए वरिष्ठ लोक अभियोजक द्वारा तैयार किए गए थे।, जिनका 22.03.2018 को

स्थानांतरण किया गया है और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए नए वरिष्ठ लोक अभि. 02.04.2018 को इस न्यायालय में शामिल होंगे। मु.जां.अधि. ने आगे कहा है कि उन्होंने केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए पूर्व वरिष्ठ लोक अभि. से परामर्श किया और 28.03.2018 को इस न्यायालय के समक्ष उनके द्वारा तैयार किए गए प्रश्नों को प्रस्तुत किया, हालांकि, उन्हें इस न्यायालय द्वारा स्वीकार्य नहीं पाया गया, क्योंकि वे क्रम में नहीं थे। इस प्रकार, मु.जां.अधि. ने साक्ष्य दर्ज करने और लागत का भुगतान करने के निर्देशों का पालन करने के लिए कुछ और समय मांगा है।

संक्षेप में, स्थिति यह है कि 03.02.2018 के बाद इस तिथि (अर्थात् लगभग 2 महीने की अवधि में), अभियुक्त व्यक्तियों के समक्ष एक भी प्रश्न नहीं रखा गया है ताकि उनकी प्रतिक्रिया धारा 313 दं.प्र.सं. के तहत हो सके, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो प्रासंगिक अपराध साक्ष्य को पेश करने में विफल रही। यह नहीं कहा जा सकता कि यह इतना छोटा समय था कि इच्छा होते हुए भी यह काम नहीं हो सका था। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के संबंधित अधिकारियों के आचरण से असंतुष्ट होने के कारण, इस न्यायालय ने 03.02.2018 को कहा कि अपराध साबित करने वाले साक्ष्य पेश करने की गति बहुत धीमी थी और इस प्रकार, अगली सुनवाई की तारीख से दो दिन पहले अपराध

साबित करने वाले साक्ष्य का पूरा मसौदा दाखिल करने का निर्देश दिया गया था। अगली तारीख एक महीने अर्थात् 05.03.2018 के बाद दी गई थी।, लेकिन ऐसा कोई मसौदा दाखिल नहीं किया गया था।

संयोग से, विद्वान् पुलिस अधीक्षक (एसडीओपी) इस मामले में 05.03.2018 को इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित थे और उन्होंने आश्वासन दिया कि सभी मामलों में न्यायालय के निर्देशों का पालन किया जाएगा। हालांकि, इस तरह के आश्वासन के बावजूद, शुद्ध परिणाम यह है कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए 25 दिनों की अवधि आवश्यक प्रशासनिक प्रक्रिया को पूरा करना अपर्याप्त हो गई, ताकि अंतिम आदेश के अनुपालन में आज अभियुक्त व्यक्तियों को लागत का भुगतान किया जा सके। मु.जां.अधि. को आज उस मसौदे को रिकॉर्ड पर रखने के लिए कहा गया था (जो मुझे 28.03.2018 की शाम के समय दिखाया गया था)। यह प्रारूप प्रश्न क्रमांक 105 से 130 अर्थात् कुल 26 प्रश्न। दुर्भाग्य से इनमें से कई प्रश्नों को उचित वाक्य में भी तैयार नहीं किया गया है, जिससे कोई अर्थ निकाला जा सके।

इस प्रारूप की एक प्रति संबंधित विद्वान पुलिस अधीक्षक , विद्वान पुलिस अधीक्षक (एसडीओपी), डीओपी और संबंधित संयुक्त निर्देशक को भेजी जाए जिससे वे केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के संबंधित

अधिकारियों द्वारा किए गए कार्यों का मूल्यांकन करेगा, ताकि दो महीने की अवधि में दोषारोपण साक्ष्य (कुल 26 प्रश्न) का ऐसा प्रारूप तैयार किया जा सके और इस न्यायालय के समक्ष यह रुख अपनाया जा सके कि क्या यह केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की ओर से काम की गुणवत्ता और गति है मैं सिर्फ यह याद दिलाना चाहता हूँ, कि यह प्राथमिकी वर्ष 1999 में दर्ज की गई थी और यह 19 साल पुराना मामला है।

सुनवाई की अगली तारीख पर, यह उम्मीद की जाती है कि कुछ जिम्मेदार अधिकारी केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो से इस न्यायालय के समक्ष पेश होंगे और इस न्यायालय को उनके द्वारा किए गए मूल्यांकन के बारे में सूचित करेंगे और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का रुख के बारे में सूचित करेंगे। यह भी उम्मीद की जाती है कि इस बीच, दोषारोपण साक्ष्य का प्रारूप तैयार करने और सुनवाई की तारीख से दो दिन पहले न्यायालय के समक्ष पेश करने के लिए पर्याप्त कदम उठाए जाएंगे।

अभियुक्त जी.एस. संधू (ए3) द्वारा एक आवेदन दायर किया गया था। 28.05.2018 से 18.08.2018 तक ऑस्टिन, यूएसए जाने की अनुमति मांग रहे हैं। मु.जां.अधि. ने इस आवेदन का जवाब दाखिल किया है, जिसमें उन्होंने इस अवधि को 25.08.2018 से 18.08.2018 के रूप में संदर्भित किया है, हालांकि, जवाब में गलत तरीके से इसका

उल्लेख किया गया है। ए3 के वकील ने एक नया आवेदन दायर किया है, जिससे अवधि को संशोधित किया जा रहा है और 06.06.2018 से 12.07.2018 तक अनुमति मांगी जा रही है, जिसमें कहा गया है कि आवेदक की बेटी को उसकी गर्भावस्था के कारण सर्जरी से गुजरना पड़ा है और चूंकि उसकी देखभाल करने के लिए परिवार के कोई निकटतम सदस्य नहीं हैं, इसलिए आवेदक पत्नी के साथ ऐसी अवधि के दौरान अपनी बेटी से मिलने का इच्छा रखता है, ताकि उसकी देखभाल की जा सके।

ए3 की बेटी ऑस्टिन, यूएसए में रहती है। मु.जाँ.अधि. ने आपत्ति जताई है कि कोई यात्रा कार्यक्रम प्रदान नहीं किया गया है और आवेदक ने अपनी बेटी का पूरा पता नहीं दिया है।

यह रिकॉर्ड की बात है कि सभी अभियुक्त व्यक्तियों को अस्थायी आवश्यकताओं के अनुसार इस तरह की अनुमति दी जा रही थी। इस मामले के रिकॉर्ड में आरोपी का पासपोर्ट जमा है। प्रस्तावित यात्रा की अवधि यानी 06.06.2018 से 12.07.2018 तक इस मामले की सुनवाई में बाधा डालने वाला नहीं है क्योंकि इसका अधिकांश भाग गर्मी की छुट्टियों में पड़ेगा।

इन परिस्थितियों में, आवेदन की अनुमति है और ए 3 को 06.06.2018 से 12.07.2018 की अवधि के लिए ऑस्टिन, को यूएसए जाने की अनुमति है, जो 12.07.2018 के बाद दो कार्य दिवसों के भीतर इस न्यायालय को वापस रिपोर्ट करेंगे और एक प्रतिभू बंधपत्र प्रस्तुत करने के अधीन जो समान राशि में 1 लाख रु. के साथ। अभियुक्त श्री जी.एस. संधू (ए3) अपने यात्रा कार्यक्रम के साथ-साथ ऑस्टिन, यूएसए में अपने स्थानीय पते के साथ-साथ अपने उपक्रमों का पूरा विवरण प्रस्तुत करेंगे। इन शर्तों को पूरा करने घर, अभियुक्त का पासपोर्ट उसे जारी किया जाए।

इस आदेश की प्रति दस्ती से पैरवी अधिकारी को सौंपी जाए, ताकि अनुपालन के लिए उपरोक्त आदेश में उल्लिखित संबंधित अधिकारियों के कार्यालयों में वितरित की जा सके। अभियुक्त के बयान के लिए 21.04.2018 को प्रकाशित करें।"

(जोर दिया गया)

8. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए विद्वान वि.लो.अभि. का तर्क है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित 05.03.2018 का आदेश तथ्यों के साथ-साथ कानून दोनों पर अनुपयुक्त है। यह तर्क दिया जाता है कि न्यायालय प्रासंगिक प्रश्नों की तैयारी में अभियोजक और बचाव पक्ष के वकील की मदद ले सकता

है, जिन्हें दं.प्र.सं.की धारा 313 के तहत अभियुक्त के सामने रखा जाना है, लेकिन सहायता को अभियोजन एजेंसी पर पूरी कवायद को पूरा करने के दायित्व के साथ नहीं किया जा सकता है और नहीं किया जाना चाहिए। यह कहा गया है कि अभियुक्त को प्रश्न तैयार करने और प्रस्तुत करने का कर्तव्य केवल न्यायालयों के पास है, और इस प्रकार, साबित करने वाले साक्ष्य की प्रश्नावली का प्रारूप प्रस्तुत न करने के लिए केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पर जुर्माना लगाना मनमाना और विकृत है।

9. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए विद्वान वि.लो.अभि. द्वारा यह भी तर्क दिया कि अन्यथा भी, रिकॉर्ड से पता चलेगा कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने सुनवाई की दो तारीखों पर प्रश्नावली का प्रारूप दायर किया था, जिसे विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों को भी प्रदान किया गया था और 31.03.2018 को सुनवाई से पहले ही, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने प्रश्नों का और प्रारूप प्रस्तुत कर दिया था, हालांकि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा उन्हें उपयुक्त नहीं पाया था। यह कहा गया है कि दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत आरोपी के बयान की रिकॉर्डिंग में यदि कोई देरी, हो। यह याचिकाकर्ता के लिए जिम्मेदार नहीं था और याचिकाकर्ता / केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पर कोई जुर्माना लगाने का कारण नहीं था। यह भी कहा गया है कि जांच एजेंसी के खिलाफ की गई टिप्पणियां अनावश्यक थीं और उन्हें रिकॉर्ड से हटा दिया गया था।

10. संबोधित तर्कों को सुना गया है और रिकॉर्ड पर सामग्री का अध्ययन किया गया है।

11. प्रारंभ में, यह न्यायालय दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत निहित प्रावधान पर ध्यान दें देना आवश्यक समझता है, जो इस प्रकार है:

**"313. अभियुक्त की जाँच करने की शक्ति।** (1) हर जांच या विचारण, में अभियुक्त को व्यक्तिगत रूप से उसके विरुद्ध साक्ष्य में उपस्थित होने वाली किसी भी परिस्थिति की व्याख्या करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से, न्यायालय -

(क) अभियुक्त किसी भी स्तर पर, पूर्व चेतावनी दिए बिना, उससे ऐसे प्रश्न कर सकता है जो न्यायालय आवश्यक समझता है;

(ख) अभियोजन पक्ष के गवाहों से पूछताछ किए जाने के बाद और अपने बचाव के लिए बुलाए जाने से पहले, मामले पर आम तौर पर उससे पूछताछ करेगा:

बशर्ते कि किसी समन-मामले में, जहां न्यायालय ने अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति को समाप्त कर दिया है, वह खंड (ख) के तहत उसकी परीक्षा को भी समाप्त कर सकता है।

(2) उपधारा (1) के अधीन जब अभियुक्त का परीक्षण किया जाता है तो उसे कोई शपथ नहीं दिलाई जाएगी।

(3) अभियुक्त ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने से इनकार करके या उन्हें गलत उत्तर देकर स्वयं को दंड का भागी नहीं होना चाहिए।



(4) अभियुक्त द्वारा दिए गए उत्तरों को ऐसी जांच या विचारण में विचार में लिया जा सकता है, और किसी अन्य अपराध की जांच या विचारण में उसके पक्ष में या उसके विरुद्ध साक्ष्य प्रस्तुत किया जा सकता है, जो ऐसे उत्तरों से यह दर्शाता है कि उसने अपराध किया है।

(5) न्यायालय अभियुक्त के समक्ष रखे जाने वाले सुसंगत प्रश्न तैयार करने में अभियोजक और बचाव पक्ष के अधिवक्ता की सहायता ले सकता है और न्यायालय इस धारा के पर्याप्त अनुपालन के रूप में अभियुक्त द्वारा लिखित कथन दाखिल करने की अनुमति दे सकता है।"

12. दं.प्र.सं. की धारा 313 की योजना के तहत **परमिंदर कौर बनाम पंजाब राज्य** (2020)एस.एस.सी.811 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विश्लेषण किया गया था।

उक्त निर्णयों का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

"22. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के तहत अभियोजन पक्ष द्वारा अपने साक्ष्य की समाप्ति करने और अपने सभी गवाहों से पूछताछ करने के बाद अभियुक्त को धारा 313 (1) (बी) द्वारा स्पष्टीकरण का अवसर दिया जाता है। अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत घटनाओं या व्याख्या के किसी भी वैकल्पिक संस्करण का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाना चाहिए और धारा 313 (4) के अधिदेश के अनुपालन में विचारण न्यायालय द्वारा विचार

किया जाना चाहिए। ऐसा अवसर अभियुक्त का न्याय पाने और अपना बचाव का एक महत्वपूर्ण अधिकार है। विचारण न्यायालय द्वारा अपने राय को निष्पक्ष रूप से लागू करने और बचाव पक्ष पर विचार करने में विफलता, दोषसिद्धि को ही खतरे में डाल सकती है। अभियोजन पक्ष के विपरीत, जिसे अपने मामले को उचित संदेह से परे साबित करने की आवश्यकता होती है, अभियुक्त को केवल उचित संदेह पैदा करने या संभावनाओं की अधिकता द्वारा अपने वैकल्पिक संस्करण को साबित करने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, एक बार एक प्रशंसनीय संस्करण को सामने रखा गया। धारा दं.प्र.सं.की धारा 313 के तहत परीक्षा चरण, फिर इस तरह के बचाव याचिका को नकारना अभियोजन पक्ष का काम है।"

13. हाल ही में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **प्रेमचंद बनाम महाराष्ट्र राज्य** 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 218 में दं.प्र.सं.की धारा 313 को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत किया है, जिन्हें संदर्भ के लिए यहां प्रस्तुत किया गया है:

15. इन अधिकारियों से जो निष्कर्ष निकलता है उसे संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

क. दं.प्र.सं. की धारा 313, [उपधारा 1 का धारा (ख)] अभियुक्त के लिए अपनी निर्दोषता साबित करने के लिए विचारण प्रक्रिया में एक मूल्यवान सुरक्षा है;

ख. धारा 313, जिसका उद्देश्य प्रत्यक्ष रूप से

**न्यायालय और आरोपी के बीच बातचीत, आरोपी से पूछताछ करने के लिए न्यायालय पर एक अनिवार्य कर्तव्य डालती है** आम तौर पर मामले पर उसे अपने खिलाफ साक्ष्य में दिखाई देने वाली किसी भी परिस्थिति को व्यक्तिगत रूप से समझाने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से;

ग. जब पूछताछ की जाती है, तो अभियुक्त अपनी संलिप्तता को बिल्कुल भी स्वीकार नहीं कर सकता है और न्यायालय द्वारा उसके सामने जो कुछ भी रखा जाता है उसे सिरे से नकारने या पूरी तरह से अस्वीकार करने का विकल्प चुन सकता है;

घ. अभियुक्त कानूनी रूप से मान्यता प्राप्त बचाव को अपनाने के लिए अपने विरुद्ध उत्पन्न की गई आपराधिक परिस्थितियों को भी स्वीकार कर सकता है या अपना सकता है;

ड. कोई अभियुक्त अभियोजन पक्ष द्वारा प्रतिपरीक्षा किए जाने के डर के बिना एक बयान दे सकता है या बाद वाले को उससे प्रतिपरीक्षा करने का कोई अधिकार है;

च. किसी आरोपी द्वारा दिये गए स्पष्टीकरण पर अलग से विचार नहीं किया जा सकता है लेकिन अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के साथ संयोजन में विचार किया जाना चाहिए और इसलिए, कोई भी दोषसिद्धि केवल धारा 313 के बयानों के आधार पर नहीं की जा सकती है;

छ. धारा 313 के अधीन परीक्षण के क्रम में अभियुक्त के बयान, साक्ष्य अधिनियम की धारा 3 के अधीन साक्ष्य का गठन नहीं करते हैं, शपथ पर न होने पर ,फिर भी दिए गए उत्तर के सत्य का पता लगाने और अभियोजन मामले की सत्यता की जांच करने के लिए प्रासंगिक हैं;

ज. अभियुक्त के कथन (ओं) को दोषसिद्धि भाग पर भरोसा करने के लिए और दोषमुक्ति भाग की अनदेखी करने के लिए विच्छेदित नहीं किया जा सकता है अन्य बातों के साथ साथ प्रवेश की दोषसिद्धि प्रकृति की प्रामाणिकता का परीक्षण करने के लिए पूरे में पढ़ा जाना चाहिए; और

झ. यदि अभियुक्त बचाव करता है और घटनाओं या व्याख्या के किसी वैकल्पिक संस्करण का प्रतिपादन करता है, तो न्यायालय को उसके बयानों पर सावधानीपूर्वक विश्लेषण और विचार करना होगा;

ञ. किसी दिए गए मामले में अपराधी परिस्थितियों के अभियुक्त के स्पष्टीकरण पर विचार करने में कोई विफलता, विचारण को शुरू और/या दोषसिद्धि को खतरे में डाल सकती है।"

(जोर दिया गया)

14. **रीना हजारिका बनाम असम राज्य में माननीय सर्वोच्च न्यायालय (2019 13 एस. सी. सी. 289 ने निम्नलिखित तरीके से धारा 313 के महत्व पर जोर दिया**

"19. दं.प्र.सं. की धारा 313 को केवल सुनवाई के अधिकार के रूप में नहीं देखा जा सकता है। यह अभियुक्त को अपनी बेगुनाही साबित करने का एक महत्वपूर्ण अधिकार प्रदान करता है और संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत एक निष्पक्ष विचारण

के संवैधानिक अधिकार के रूप में एक वैधानिक अधिकार से अलग माना जा सकता है, भले ही इसे मूल साक्ष्य के एक भाग के रूप में नहीं माना जाना चाहिए, जो दं.प्र.सं. की धारा 313 (2) के तहत शपथ पर न हो। इस न्यायालय द्वारा इस अधिकार के महत्व पर अनेको बार विचार किया गया है, लेकिन इसे अभी भी व्यवहार में लागू किया जाना बाकी है जैसा कि हम वर्तमान में आने वाली चर्चा में देखेंगे।”

15. इसके अलावा, **सतबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य (2021) 6 एससीसी 1** में,माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है:

“38.6.यह गंभीर चिंता का विषय है कि अक्सर, विचारण न्यायालय दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत बयान को बहुत ही आकस्मिक और सरसरी तरीके से दर्ज करती हैं, जिसमें आरोपी से उसके बचाव के बारे में विशेष पूछताछ नहीं की जाती है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि दं.प्र.सं.की धारा 313, के तहत एक आरोपी की पूछताछ को केवल प्रक्रियात्मक औपचारिकता के रूप में नहीं माना जा सकता है, क्योंकि यह निष्पक्षता के मूल सिद्धांत पर आधारित है। इस पूर्वोक्त प्रावधान में प्राकृतिक न्याय के मूल्यवान सिद्धांत "सुनवाई के अधिकार को शामिल किया गया है क्योंकि यह अभियुक्त को उसके खिलाफ पेश होने वाली आपत्तिजनक साक्ष्य के लिए स्पष्टीकरण देने में सक्षम बनाता है। इसलिए, यह न्यायालय पर एक दायित्व डालता है कि वह सतकर्ता और सावधानी के साथ आरोपी से निष्पक्ष रूप से पूछताछ करे।

38.7 न्यायालय को अभियुक्त के सामने अपराध को साबित करने वाली परिस्थितियों को रखना चाहिए और उसका जवाब मांगना चाहिए। अभियुक्त के अधिवक्ता पर सह कर्तव्य है कि

कि विचारण की शुरुआत से ही उचित सावधानी के साथ अपना बचाव तैयार करे।”

(जोर दिया गया)

16. इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के संदर्भ से पता चलता है कि दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत एक आरोपी की जांच की गई थी। यह केवल औपचारिकता या व्यर्थ अभ्यास नहीं है यह सुनवाई के अधिकार के मूल सिद्धांत का प्रतीक है [यह भी देखें: **सनातन नास्कर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (2010) 8 एस. सी. सी. 249; कालीचरण और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य प्रदेश (2023) 2 एससीसी 583**]। यह एक मामले के मुकदमे में एक महत्वपूर्ण कदम है और इसका उद्देश्य एक आरोपी को उसके खिलाफ सामने आने वाले साक्ष्य की व्याख्या करने में सक्षम बनाना है, जिसे न्यायालय द्वारा उसके सामने रखा जाता है।

17. दं.प्र.सं. की धारा 313 के उप-धारा (5) जोड़ने से पहले एक संशोधन के माध्यम से, **मीर मोहम्मद ओमर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1989) 4 एस. सी. सी. 436** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि न्यायालयों को किसी अभियोजक या अधिवक्ता से परामर्श करने की कोई आवश्यकता नहीं थी कि अभियुक्त से क्या प्रश्न पूछे जाने चाहिए, क्योंकि यह न्यायालय का कर्तव्य था कि वह विधि के अनुसार अभियुक्त की परीक्षा करे।

18. हालांकि, वर्ष 1996 में प्रकाशित 154 वीं विधि आयोग की रिपोर्ट ने विचारणों में देरी को रोकने के आदेश दं.प्र.सं. की धारा 313 में निश्चित बदलावों का सुझाव दिया था। जिसके बाद, निष्पक्ष और त्वरित न्याय सुनिश्चित करने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली को मजबूत बनाने की आवश्यकता महसूस की गई, दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 2006 को दं.प्र.सं. में कई परिवर्तनों को शामिल करने के लिए प्रस्तुत किया गया था, जिसमें भारत के विधि आयोग द्वारा अपनी 154 वीं और 177 वीं रिपोर्ट में सुझाए गए परिवर्तन भी शामिल थे, और बाद में यह विधेयक दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 में परिणत हुआ 2008 के इस संशोधन के माध्यम से, उप-धारा (5) को धारा 313 दं.प्र.सं. में जोड़ा गया था, जो निम्नानुसार है:

(5) न्यायालय अभियुक्त से पूछे जाने वाले प्रासंगिक प्रश्नों को तैयार करने में अभियोजक और बचाव अधिवक्ता से मदद ले सकते और न्यायालय इस धारा के पर्याप्त अनुपालन के रूप में अभियुक्त द्वारा लिखित कथन दाखिल करने की अनुमति दे सकता है।"

(जोर दिया गया)

19. मौजूदा मामले में इस न्यायालय के समक्ष मुद्दा, मुख्य रूप से दं.प्र.सं. की धारा 313 (5) की व्याख्या से संबंधित प्रश्न उठाता है।

20. भारत के विधि आयोग की 154 वीं रिपोर्ट द्वारा निर्देशित, इस प्रावधान को प्रस्तुत करने का आशय यह सुनिश्चित करना था कि दं.प्र.सं. की धारा 313 के

तहत प्रश्नों को तैयार करने की प्रक्रिया के कारण मामलों के विचारण में होने वाली देरी को कम किया जा सके, न्यायालय को उचित और प्रासंगिक प्रश्न तैयार करने में अभियोजकों और बचाव पक्ष के अधिवक्तागण की मदद लेने की अनुमति दी गई थी, जिसे धारा 313 की योजना के अनुसार अभियुक्त के सामने रखा जा सकता था। तथापि, इस उपबंध की प्रासंगिकता और महत्व को ध्यान में रखते हुए, यह किसी भी माध्यम से उचित नहीं ठहराया जा सकता है कि विधानमंडल का उद्देश्य पूरी तरह से अभियोजन या बचाव पक्ष के वकीलों को प्रासंगिक प्रश्न तैयार करने का कर्तव्य सौंपना था, और धारा 313 (5) में "सहायता ले सकता है" शब्दों का उपयोग उसी का सूचक है। धारा 313 (5) को लागू किए जाने के पश्चात् भी, प्रश्न तैयार करें और अभियुक्त के सामने अपराध साबित करने वाले साक्ष्य प्रस्तुत करें जो केवल न्यायालयों के पास ही निहित हैं।

21. अभियोजक या बचाव पक्ष के अधिवक्ता से सहायता लेने का विवेकाधिकार न्यायालय को व्यक्तिगत रूप से यह पता लगाने के अपने प्राथमिक कर्तव्य से मुक्त नहीं कर सकता है कि क्या दोषपूर्ण है। और फिर अभियुक्त से पूछताछ की जाए। दूसरे शब्दों में, यह विचार रखना बहुत दूर की बात होगी कि प्रासंगिक प्रश्न तैयार करने में अभियोजकों की सहायता लेने की न्यायालय की शक्ति या विवेकाधिकार का अर्थ यह होगा कि न्यायालय का यह कर्तव्य पूरी तरह से अभियोजन एजेंसी के लिए छोड़ दिया जा सकता है।



22. धारा 313 के तहत किसी अभियुक्त की जाँच अनिवार्य रूप से न्यायालय और अभियुक्त के बीच एक वार्तालाप बनी हुई है, और यह महत्वपूर्ण न्यायिक कार्य न्यायालय द्वारा ही किया जाना है। यह केवल वही सहायता है जो न्यायालय धारा 313 (5) के अनुसार मांग सकता है, तथापि, यह सदैव स्वयं न्यायालय का प्राथमिक कर्तव्य है कि वह मामले के अभिलेखों से अभियुक्त के विरुद्ध दोषपूर्ण साक्ष्य निकाले और फिर उसे अभियुक्त के समक्ष रखे और उसका स्पष्टीकरण मांगे, क्योंकि न्यायालय सबसे अच्छा न्यायकर्ता है कि क्या दोष साबित करता है और क्या नहीं।

23. इस न्यायालय की राय में, दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत अभियुक्त की पूछताछ के स्तर पर, न्यायालय सुसंगत प्रश्नों की तैयारी में अभियोजक के साथ-साथ बचाव पक्ष के अधिवक्ता की सहायता ले सकते हैं, तथापि, न्यायसंगत और निष्पक्ष विचारण के लिए, न्यायालय के लिए यह उपयुक्त है कि वह अभियुक्त के विरुद्ध दोषपूर्ण साक्ष्य के बारे में अपने स्वयं के मूल्यांकन के आधार पर अभियुक्त का आकलन करे जो अभिलेख पर आया है।

24. न्यायालय यह अवलोकन करने के लिए विवश है कि न्यायालय का कर्तव्य वर्तमान मामले में अभियोजन एजेंसी को सौंपने का प्रयास किया गया है। न्यायिक कार्य जो किसी भी आपराधिक मामले के लिए महत्वपूर्ण है स्वयं न्यायालय द्वारा निष्पादित किया गया न कि अभियोजन अभिकरण द्वारा।

अभियोजन संस्था का कार्य और कर्तव्य साक्ष्य का नेतृत्व करना है और यह विचारण न्यायालय का काम है कि वह गवाहों की गवाही के आधार पर अभिलेख पर दोषारोपण तथ्य का पता लगाए जिसमें मुख्य परीक्षा के साथ-साथ प्रतिपरीक्षा भी शामिल है और उसके बाद अभियुक्त के समक्ष दोषारोपण साक्ष्य प्रस्तुत करे। कहने की जरूरत नहीं है कि यह आपराधिक मुकदमे का एक महत्वपूर्ण चरण है। अभियुक्त का बयान तैयार करना अभियोजन संस्था का प्राथमिक कर्तव्य नहीं था और यह कर्तव्य विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा ही निभाया जाना था।

25. इस प्रकार, याचिकाकर्ता/केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को आरोपी व्यक्तियों के बयान दर्ज करने में देरी के लिए दोषी नहीं पाया जा सकता था।

26. चूंकि याचिकाकर्ता/ केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो. विवादित आदेशों में अपने कामकाज के खिलाफ विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निश्चित टिप्पणियों को हटाने की भी मांग की है, इसलिए इस संबंध में स्थापित न्यायिक सिद्धांतों पर ध्यान दें देना उचित होगा।

27. "आपराधिक मामलों के विचारण में अभ्यास" के लिए दिल्ली उच्च न्यायालय के नियमों के अध्याय 1 के खंड 6, भाग एच ("निर्णय") पुलिस और अन्य अधिकारियों के आचरण पर आलोचना से संबंधित है और इस संबंध में मार्गदर्शन प्रदान करती है। उसी को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:

"6. पुलिस और अन्य अधिकारियों के आचरण की आलोचना: न्यायालय के लिए पुलिस अधिकारियों की कार्रवाई की निंदा करने वाली टिप्पणियां करना अवांछनीय है जब तक कि ऐसी टिप्पणियां मामले से पूरी तरह प्रासंगिक न हों- यह देखा जा सकता है कि इस देश में पुलिस को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, मुख्य रूप से उन्हें अपराध का पता लगाने के प्रयासों में लोगों से बहुत कम संवेदना या सहायता मिलती है। उनके लिए इससे अधिक निराशाजनक कुछ नहीं हो सकता है कि जब वे किसी मामले को सुलझा लेते हैं, तो न्यायालय द्वारा उन्हें अविश्वास की नजर से देखती है, कि छोटी से छोटी अनियमितता को गंभीर दुराचार में बदल दिया जाता है और गलत उपयोग के प्रत्येक आरोप को आसानी से सच के रूप में स्वीकार किया जाता है। इस तरह के आरोप कभी-कभी सच हो सकते हैं, इस बात से इनकार करना असंभव है, लेकिन बारीकी से जांच करने पर वे आम तौर पर अधिक बार झूठे पाए जाते हैं। न्यायिक अधिकारियों की ओर से पुलिस के खिलाफ किसी भी बात और हर चीज पर विश्वास करने में अधिक-तत्परता नहीं होनी चाहिए; लेकिन अगर यह साबित हो जाए कि पुलिस ने बलपूर्वक बयान लिया या गवाहों को सिखा-पढ़ाकर सबूत बनाए हैं तो उन्हें शायद ही बहुत गंभीर रूप से दंडित किया जा सकता है। जब भी किसी मजिस्ट्रेट को किसी सरकारी कर्मचारी के काम और आचरण पर कोई आलोचना करना आवश्यक लगे, तो उसे अपने निर्णय की एक प्रति जिला मजिस्ट्रेट को भेजनी चाहिए, जो इसकी एक प्रति गृह सचिव के परिपत्र पत्र सं. 920-जे-36/14753, दिनांक 15 अप्रैल, 1936."का संदर्भ देते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय के निबंधक को भेजेगा"

28. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने डॉ. दिलीप कुमार डेका और अन्य ने बनाम

असम और अन्य राज्य। (1996) 6 एस. सी. सी. 234 में अधिकारियों के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणियों के निष्कासन के प्रश्न का निर्णय करते समय लागू किए जाने वाले परीक्षणों पर विस्तार से बताया था और प्रासंगिक टिप्पणियों को निम्नानुसार पढ़ा गया था:

"6. किसी व्यक्ति या अधिकारियों के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणियों के निष्कासन के प्रश्न से निपटने के दौरान लागू किए जाने वाले परीक्षण, जिनके द्वारा निर्णय लिए जाने वाले मामलों में कानून की न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आता है, इस न्यायालय द्वारा संक्षिप्त रूप से यु.पी. राज्य बनाम मो.नईम [एआईआर 1964 एससी 703:(1964) 1 आ.का.ज. 549:(1964) 2 एससीआर 363] में निर्धारित किया गया था। वे परीक्षण इस प्रकार हैं:

(क) क्या वह पक्ष जिसका आचरण विचाराधीन है, न्यायालय के समक्ष है या उसे खुद को समझाने या बचाव करने का अवसर है;

(ख) क्या उस आचरण के संबंध में अभिलेख पर कोई साक्ष्य है जो टिप्पणियों को न्यायोचित ठहराता है; और

(ग) क्या मामले के निर्णय के लिए, उसके अभिन्न अंग के रूप में, उस आचरण को सक्रिय करना आवश्यक है.....।

29. इस पीठ ने अजीत कुमार बनाम राज्य (रा.रा.क्षे.दिल्ली) 2022 एससीसी ऑनलाइन डेल 3945 में भी न्यायिक संयम बरतने के निर्देश जारी किए थे और कहा था कि न्यायिक अधिकारियों को पुलिस अधिकारियों और अभियोजन

एजेंसियों के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणी करने से बचना चाहिए। उक्त निर्णय के प्रासंगिक भाग को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:

"37. न्यायिक आदेश का हिस्सा बनने वाला प्रत्येक शब्द स्थायी रिकॉर्ड बनाता है। किसी के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणियों का उपयोग, विशेष रूप से पुलिस अधिकारियों के खिलाफ उनकी विश्वसनीयता पर महाभियोग चलाना और कर्तव्य के प्रति उनके समर्पण की भावना पर सवाल उठाना, एक न्यायिक अधिकारी द्वारा अपनाया गया तरीका अच्छा नहीं है, वह भी तब जब न्यायालय के समक्ष मामले के निर्णय के लिए इसकी आवश्यकता नहीं है। इस तरह की आलोचना का एक अधिकारी के पेशेवर व्यवसाय पर विनाशकारी प्रभाव पड़ सकता है। इसका किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा पर चिरस्थायी प्रभाव पड़ना भी तय है। यह न्यायालय इस तथ्य से अवगत है कि पुलिस अधिकारियों से आम जनता के साथ-साथ न्यायालयों द्वारा अत्यधिक दक्षता के साथ अपेक्षित स्थान और अपेक्षित समय पर होने की अपेक्षा की जाती है। यद्यपि पुलिस अधिकारी पूर्ण विश्वास के साथ अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन करने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं, लेकिन न्यायालयों द्वारा उनके सामने आने वाली व्यावहारिक कठिनाइयों को नजरअंदाज किया जा सकता है। साथ ही, न्यायालयों द्वारा इस प्रकार के संबंध को किसी भी कल्पना या व्याख्या के विस्तार से न्यायालय द्वारा निर्देशित किसी भी कार्य की किसी भी अनियमितता को हटाने या करने या न्यायालय के निर्देशों का पालन करने के लिए किसी भी अवज्ञा को इंगित करने की शक्ति के संबंध में आदेश पारित करने के लिए न्यायालय की शक्ति की कमी नहीं माना जा सकता है। इसके बजाय यह न्यायालय इस आदेश के माध्यम से यह बताना चाहता है कि किसी के भी खिलाफ न्यायिक सख्ती को अत्यंत सावधानी के साथ पारित

करने की आवश्यकता है। न्यायिक शक्ति स्वयं को व्यक्त करने के लिए न्यायिक स्वतंत्रता का प्रयोग करने की अत्यधिक जिम्मेदारी के साथ आती है। वर्तमान मामले में व्यक्त की गई सीमा तक एक पुलिस अधिकारी के खिलाफ न्यायिक सख्ती समस्याग्रस्त है, हालांकि अभिव्यक्ति की न्यायिक स्वतंत्रता के प्रयोग द्वारा व्यक्त की गई प्रत्येक अस्वीकृति न्यायिक संयम की कमी के दायरे में नहीं आ सकती है।

\*\*\*\*

39. यह न्यायालय एक बार फिर यह स्पष्ट करता है कि यह आदेश किसी भी प्रकार से न्यायालय की महिमा या इस तथ्य को कम नहीं करता है कि संबंधित पुलिस अधिकारियों द्वारा न्यायिक निर्देशों का पालन करने की आवश्यकता है और उनकी अवज्ञा को इंगित करने वाले आदेश पारित करने या जांच में किसी भी गलती को इंगित करने के लिए न्यायालयों की शक्ति आदि पर सवाल नहीं उठाया जा सकता है, हालांकि, इस संबंध में, "आपराधिक मामलों के विचारण में अभ्यास" के लिए दिल्ली उच्च न्यायालय के नियमों के अध्याय 1 की धारा 6, भाग एच ("निर्णय") को ध्यान में रखने की आवश्यकता है और इस तरह की टिप्पणियों को पारित करते समय माननीय सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायिक पूर्व निर्णय को भी मार्गदर्शक शक्ति के रूप में ध्यान में रखा जाना चाहिए जो सख्ती के बराबर है।

\*\*\*\*

41. न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और आदेश अक्सर स्थायी प्रकृति के होते हैं, इसलिए कभी-कभी किसी विशेष मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अनुचित टिप्पणी के अनावश्यक के

कारण व्यक्ति से कलंक जुड़ने पर भी पीड़ित होता है। देश के न्यायिक शक्ति के रूप में, कानून और न्यायिक कार्यवाही द्वारा आवश्यक न्यायिक संयम एक न्यायिक अधिकारी के गुणों में से एक है।”

30. दिनांक 05.03.2018 के आदेश में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और उसके अधिकारियों के कामकाज के विरुद्ध विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियाँ और उसी आदेश द्वारा उस पर अधिरोपित जुर्माना, मुख्य रूप से इस तथ्य से उद्भूत होती है कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो प्रश्न का प्रारूप प्रस्तुत करने में विफल रही थी और जिसके कारण दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत अभियुक्त व्यक्तियों का ब्यान दर्ज किए जाएंगे। हालांकि, जैसा कि पूर्ववर्ती पैराग्राफ में देखा गया है, सबसे पहले, विद्वान विचारण न्यायालय ने प्रासंगिक प्रश्नों को तैयार करने में सहायता लेने के बजाय, अनिवार्य रूप से जांच एजेंसी के लिए अपनी पूरी जिम्मेदारी का त्याग कर दिया था, जो दं.प्र.सं. की धारा 313 के अनुसार भी कानून में स्वीकार्य नहीं था। दूसरा, जांच एजेंसी ने पहले लगभग 104 मसौदा प्रश्न प्रस्तुत किए थे, जो विचार के बाद आरोपी व्यक्तियों को भी प्रदान किए गए थे; तीसरा, भले ही जांच एजेंसी निर्धारित सुनवाई की दिनांक 05.03.2018 से पहले पूरे प्रश्नों का प्रारूप दाखिल नहीं कर सकी। उस दिन संबंधित अभियोजक ने प्रश्न तैयार करने की पेशकश की थी, हालांकि, इस अनुरोध को भी विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकार विद्वान गया था।

31. इसके अलावा, दिनांक 31.03.2018 के आदेश में विद्वान विचारण न्यायालय की टिप्पणियों में कहा गया है कि 26 प्रारूप प्रश्नों को उचित वाक्यों में तैयार नहीं किया गया था जिसमें कोई अर्थ बनाया जा सके और उसके बाद निर्देश दिया गया कि उक्त प्रारूप की प्रति संबंधित एसपी, संबंधित एसपी (एसडीओपी), डीओपी के साथ-साथ संयुक्त निदेशक को भेजी जाए ताकि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के संबंधित पदाधिकारियों द्वारा दो महीने की अवधि में साबित करने वाले साक्ष्य का ऐसा प्रारूप तैयार करने की उनकी क्षमता के बारे में मूल्यांकन किया जा सके और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के काम की गुणवत्ता और गति को पता लगाया जा सके साथ ही यह भी कहा कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का एक जिम्मेदार अधिकारी न्यायालय में उपस्थित होगा और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो अधिकारियों द्वारा किए जा रहे काम की क्षमता के मूल्यांकन के बारे में सूचित करेगा। इसको वर्तमान परिस्थितियों में नहीं बोला गया। इस संबंध में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यदि विद्वान विचारण न्यायालय ने प्रारूप प्रश्नों को उचित वाक्यों में तैयार नहीं पाया तो विद्वान विचारण न्यायालय, जिसे केवल अभियुक्त का बयान तैयार करने के लिए केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की सहायता लेनी चाहिए थी, कम से कम अपनी संतुष्टि के अनुसार वाक्यों को सहज रूप से तैयार कर सकता था। जैसा कि पूर्ववर्ती चर्चा में पहले ही देखा जा चुका है, कि कानून केवल सहायता लेने का प्रावधान करता है न कि अभियुक्त के पूरे बयान को तैयार करने या अभियुक्त से सवाल पूछने के लिए अभियोजन



पक्ष पर दबाव डालने का। यह विचारण का एक महत्वपूर्ण चरण पर है और स्वयं न्यायालय का कर्तव्य बन गया है।

32. इसके अलावा, संबंधित अधिकारियों के सामर्थ्य और कार्य क्षमता के मूल्यांकन के लिए आदेश देना, जिन्होंने ऐसे प्रश्नों का प्रारूप तैयार किया और संबंधित अधिकारियों की क्षमता और कार्य का मूल्यांकन करने के लिए संयुक्त निदेशक और डी. ओ. पी. को लिखने की हद तक जाना पूरी तरह से अनुचित था। यदि अंग्रेजी भाषा में बनाए गए वाक्य असंतोषजनक पाए गए, तो न्यायालय को यह ध्यान करना चाहिए था कि यह प्रश्नों का मसौदा तैयार करने वाले अधिकारियों की मातृभाषा नहीं है और सभी लिखित या बोली जाने वाली अंग्रेजी में अच्छी तरह से दक्ष और कुशल नहीं हो सकते हैं जो उन लोगों की अपेक्षाओं और स्तर से मेल खाते हैं जिन्होंने विदेशी भाषा में महारत हासिल की है।

33. इसमें कोई संदेह नहीं है कि दिल्ली के न्यायालयों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता है, हालांकि, जिस भाषा में अधिकारी दक्ष न हो, उस भाषा में प्रश्न गलत तरीके से तैयार करने के लिए किसी को फटकारना किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी को शोभा नहीं देता।

34. न्यायिक आचरण और संयम के महत्व पर चर्चा की गई है और इसके महत्व को अतीत में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय द्वारा भी उजागर किया गया है। प्रतिष्ठा संबंधी चिंताएं अक्सर न्यायिक आदेश

में किसी अधिकारी या व्यक्ति के खिलाफ की गई निदात्मक टिप्पणियों के कारण होती हैं जो मामले या स्थिति की आवश्यकता नहीं हो सकती है।

35. किसी व्यक्ति की काम करने की क्षमता का मूल्यांकन करने के लिए एक अधिकारी के अनुशासनात्मक प्राधिकरण को लिखना न्यायिक निर्णय प्रक्रिया के विवादित विषय के घेरे में नहीं आती है जहाँ यह प्रश्नगत नहीं है इस तरह के प्रतिबंधों को पारित करते समय और उन्हें अनुशासनात्मक प्राधिकारी को भेजते समय न्यायिक संयम की आवश्यकता का प्रयोग किया जाना चाहिए क्योंकि वे किसी व्यक्ति के साथ अन्याय करने के बराबर हो सकते हैं जो अपराधी नहीं है, बल्कि न्यायालय के समक्ष एक प्रतिवादी है, जबकि कथित अपराधी के साथ न्याय दिलाने की प्रक्रिया में है।

36. इस विशेष मामले या किसी भी मामले में न्याय की आवश्यकता को कानून द्वारा समर्थित न्यायिक प्रणाली पर आधारित होना चाहिए, और प्रतिबंधों को कानून के अनुसार सावधानी और आत्म-संयम के साथ पारित किया जाना चाहिए। जैसा कि इस न्यायालय ने अवलोकन किया है, यदि प्रयुक्त भाषा और वाक्यों का निर्माण, जो अंग्रेजी भाषा में स्वीकार्य या संबंधित न्यायालय की अपेक्षा के अनुरूप नहीं था, तो विद्वान विचारण न्यायालय को विशेषतः स्वयं वाक्य तैयार करने चाहिए थे क्योंकि अभियोजन पक्ष का कर्तव्य विद्वान

विचारण न्यायालय के समक्ष दोषपूर्ण साक्ष्य और वह भी न्यायालय की सहायता करने की उनकी भूमिका की क्षमता में प्रस्तुत करना था।

37. इस प्रकार, डीओपी के वरिष्ठों/प्रमुख को अपमानजनक टिप्पणी भेजना और उन्हें न केवल संबंधित व्यक्तियों, बल्कि न्यायालय में काम करने की उनके अपने विभाग की क्षमता का आकलन करने के लिए कहना, उन परिस्थितियों में अनावश्यक था जिनमें विवादित आदेश पारित किया गया था।

38. हालांकि, यह सच हो सकता है कि न्यायपालिका को अलोकप्रिय समझे जाने के डर से आदेश पारित करने से नहीं बचना चाहिए साथ ही, व्यापक प्रश्न यह है कि क्या किसी न्यायाधीश को अभियोजन के अधिकारियों की न्यायालय की सहायता करने की उनकी क्षमता के संबंध में उसके सामने उपस्थित होने पर टिप्पणी करनी चाहिए और उसके बाद उन्हें न्यायालय के सामने पेश होने और यह सूचित करने के लिए कहना चाहिए कि क्या उन्होंने ऐसे अधिकारियों की क्षमता का आकलन किया है यह विभाग के साथ-साथ संबंधित अधिकारी को भी एक मुश्किल स्थिति में डाल देगा। वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन और किसी भी विभाग के अधिकारियों की क्षमता का मूल्यांकन उक्त विभाग के वरिष्ठों और संबंधित अधिकारियों पर छोड़ दिया जाना चाहिए। और किसी भी घोर दुर्व्यवहार को दी गई परिस्थितियों में संबंधित अधिकारियों के संज्ञान में लाया जा सकता है, यदि परिस्थितियां ऐसी मांग करती हैं, लेकिन अभियोजक और राज्य की

योग्यता को पूरी तरह से कमजोर करने के लिए और यह कहने के लिए कि वे न्यायिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहायता करने में असमर्थ हैं - निर्णय लेना एक चिंता का विषय है। इसके समक्ष उपस्थित होने वाले पक्षों के प्रति न्यायिक संवेदनशीलता और सम्मान न्यायिक निर्णय लेने की प्रक्रिया का एक हिस्सा है। ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय मामले की धीमी प्रगति पर अपनी नाराज़गी व्यक्त कर सकता था, हालांकि, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की पूरी संस्था की क्षमता और सामर्थ्यता पर टिप्पणी करना और इसके अधिकारी कैसे काम करते हैं, और न्यायालय में पेश होना और इस बात पर रुख करना कि क्या केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो इस तरह से काम करेगी, यह न तो संबंधित विचारण न्यायालय का संस्थागत और न ही प्रशासनिक कार्य था।

39. न्यायालय के लिए यह गैर-जिम्मेदाराना होगा कि वह जमीनी वास्तविकताओं से बेखबर रहकर टिप्पणी करे कि हर कोई अंग्रेजी भाषा में अति-कुशल नहीं हो सकता है। न्यायाधीशों का प्रमुख कर्तव्य व्यक्तिगत मामलों में न्याय करना है, और मामलों का फैसला करते समय एक न्यायिक अधिकारी द्वारा प्राप्त विशेषाधिकार और प्रतिरक्षा और अत्यधिक सावधानी के साथ इसका प्रयोग करने की एक बड़ी जिम्मेदारी होती है। यह आदेश, किसी भी तरह से, न्यायालयों की महिमा या शक्ति को कमजोर नहीं करता है, बल्कि इसका उद्देश्य केवल न्यायिक संयम का प्रयोग करने की आवश्यकता को दोहराना है,

जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पहले ही कई अवसरों पर दोहराया जा चुका है।

40. ऐसी परिस्थितियों में, इस न्यायालय की राय है कि न्यायालय में उपस्थित होने की किसी व्यक्ति की क्षमता; विशेषज्ञता या वैधता और उस संस्था में सहायता करने या काम करने की उसकी क्षमता ; जिसके लिए वह काम करता है, न्यायालय द्वारा स्वयं नहीं ली जानी चाहिए, और असंतोष और असहमति, यदि कोई हो, सम्मानपूर्वक, संयमित और विनम्र तरीके से व्यक्त की जानी चाहिए। सार्वजनिक रूप से उपलब्ध न्यायिक आदेश के माध्यम से सार्वजनिक अपमान और अनादर का प्रभाव किसी व्यक्ति के आत्मसम्मान और समाज में उसकी प्रतिष्ठा पर अधिक होता है। न्यायालय को ऐसी प्रतिबंधों के बाद के प्रभावों और ऐसी टिप्पणियों के परिणामों पर नजर रखनी चाहिए।

41. इसके अलावा, इस न्यायालय द्वारा दिनांक 05.03.2018 के आदेश में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित व्यापक टिप्पणियों पर ध्यान दिया गया है कि अभियोजन संस्था के लिए एक चेतावनी दर्ज की जा रही है कि यदि भविष्य में अपने समक्ष लंबित किसी भी मामले में ऐसी ही स्थिति उत्पन्न होगी, तो न्यायालय न्यायालय की अवमानना के लिए निर्देश देने हेतु कारण बताओ सूचना जारी करने के बारे में सोचने के लिए मजबूर होगा। विद्वान विचारण न्यायालय ने इन टिप्पणियों को अपने समक्ष लंबित सभी मामलों के संदर्भ में

पारित किया और एक पूर्व चेतावनी दी कि वह इस तरह की किसी भी देरी या उनकी ओर से किसी भी प्रकार की चूक के मामले में अभियोजन संस्था को अवमानना नोटिस जारी करेगा। यह न्यायालय यह समझने से असमर्थ है कि खतरे की प्रकृति में इस तरह की चेतावनी को न्यायिक आदेश का हिस्सा कैसे बनाया जा सकता है। अवमानना आदेश सहित प्रत्येक न्यायिक आदेश, जो किसी भी व्यक्ति या संस्था के लिए एक गंभीर मामला है, को संबंधित व्यक्ति या संस्था के तथ्यों और आचरण की व्यक्तिगत रूप से जांच करने के बाद अत्यंत सावधानी के साथ पारित किया जाना चाहिए। इसलिए, यह न्यायालय दिनांक 05.03.2018 के आक्षेपित आदेश में निहित उक्त टिप्पणियों को हटाने के लिए भी इच्छुक है।

42. इस प्रकार, पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय की राय है कि इस निर्णय के पैराग्राफ 6 और 7 में जैसा कि पुनः प्रस्तुत और जोर दिए गए कि आक्षेपित आदेशों में याचिकाकर्ता/केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के खिलाफ टिप्पणी करना विद्वान विचारण न्यायालय के लिए अनावश्यक था, और तदनुसार, उन्हें आलेख से मिटा/हटा दिया गया है।

43. इसके अलावा, दिनांक 05.03.2018 का आदेश जहां तक यह याचिकाकर्ता / केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पर रु. 16,600/- की कुल जुर्माना लगाने से संबंधित है, इस आधार पर कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत

आरोपी से बयान दर्ज करने में देरी के लिए जिम्मेदार थी। और उनके गैर-जिम्मेदाराना आचरण उस दिन प्रदान किए गए स्थगन का कारण था इसको भी पूर्ववर्ती पैराग्राफ में बताए गए कारणों के लिए अपास्त किया जाता है।

44. इस न्यायालय ने प्रश्नों को तैयार करने में देरी के संबंध में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त की गई अप्रसन्नता को समाप्त नहीं किया है क्योंकि न्यायालय अपने न्यायिक क्षेत्र में ऐसा कर सकता था, हालांकि, अभियोजन पर उसी का पूरा बोझ डालने के संबंध में अनियमितता और अवैधता जो कानून के तहत अनुमेय नहीं है, निर्णय में अलग से चर्चा की गई है और उस पर निर्णय दिया गया है। इसके अलावा, यह न्यायालय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित न्यायिक संयम के सिद्धांतों द्वारा निर्देशित होने के कारण, संबंधित न्यायिक अधिकारी के खिलाफ कोई आदेश पारित करना उचित नहीं समझता है, लेकिन इस निर्णय के माध्यम से, किसी भी अधिकारी या प्राधिकरण के खिलाफ मामले की परिस्थितियों में अनावश्यक न्यायिक सख्ती और अनावश्यक टिप्पणियों को पारित करते समय अत्यधिक संयम बरतने की आवश्यकता को दोहराता है पर जोर देता है। **अजीत कुमार बनाम राज्य (सुप्रा)** मामले में इस पीठ ने उस प्रक्रिया को इंगित किया है जिसे एक न्यायाधीश कदाचार आदि के मामले में अपना सकता है। कि दिल्ली उच्च न्यायालय के प्रासंगिक नियमों के तहत निर्धारित उनके वरिष्ठों को सूचित किया जाना है।

45. तदनुसार, वर्तमान याचिका, लंबित आवेदन, यदि कोई हो, के साथ उपरोक्त शर्तों में निपटान किया है।

46. फैसला तुरंत वेबसाइट पर अपलोड किया जाए।

न्यायाधीश स्वर्ण कांता शर्मा

अप्रैल 18,2023

के.एस.एस

*(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)*

**अस्वीकरण** : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।